भारतीय खगोल वेधशाला

हैनले लद्दाख

बी. सी. भट्ट

खगोल विज्ञान एक दृश्य प्रकाशीय विज्ञान के रूप में प्रारम्भ हुआ और मनुष्य ने हमेशा चाहा कि इस अन्तरिक्ष को बिना व्यवधान के देखे और उसके बारे में अधिकतम जानकारी प्राप्त करे। लेकिन पृथ्वी का वायुमंडल और हमारे आसपास का वातावरण इस अध्ययन में व्यवधान उत्पन्न करता है। इसीलिये प्राचीन समय से ही मानव इसके अध्ययन के लिए एकांत और ऊँचाई पर स्थित जगहों का उपयोग करता था। अन्तरिक्ष के अध्ययन के लिये मात्र साफ-स्वच्छ आकाश ही पर्याप्त नहीं है। वैज्ञानिक विकास एवं दूरबीन प्रयोग के साथ ही यह भी मालूम हुआ कि पृथ्वी का वायुमंडल और हमारे आसपास का वातावरण किस प्रकार से हमारे खगोलीय आंकलन को प्रभावित करता है। आसपास का वायुमण्डल, मौसम, भूगोल एवं पर्यावरण सुदूर अन्तरिक्ष से आने वाले प्रकाश पुंज को प्रभावित कर सकता है। दूरबीन तकनीक के विकास के साथ ही इस बारे में भी सोचा जाने लगा कि इस वायुमण्डल और वातावरण के व्यवधान को न्यूनतम कर किस तरह दूरबीन का अधिकतम उपयोग किया जाय। इस संदर्भ में सर आइज़क न्यूटन ने कहा था - "इस प्रकार की दूरबीन नहीं बनायी जा सकती जोकि वायुमंडल द्वारा उत्पन्न प्रकाश किरणों के स्पन्दन विशाल ब्रह्माण्ड खगोलीय रहस्यों को सुलझाने की बड़ी प्रयोगशाला है। आकाशीय पिण्ड से उत्पन्न अथवा परावर्तित प्रकाश पुंज जो हम तक पहुँच रहा है वह उस पिण्ड की जानकारी का स्रोत है। प्राचीन काल से ही मानव सभ्यता ने आंखों की क्षमता का उपयोग कर इस असीम दृश्य ब्रह्माण्ड के बारे में जानकारी प्राप्त की। सुदूर अन्तरिक्ष से आने वाले इस प्रकाश पुंज को हम कैसे संबंधित कर स्पष्ट प्रतिबिम्ब का निर्माण कर सकते हैं यह खगोल विज्ञान के लिये हमेशा चुनौतीपूर्ण रहा है। दूरबीन का आविष्कार खगोल विज्ञान के लिये क्रान्तिकारी कदम रहा है। हालांकि दूरबीन का आविष्कार लिपरशे ने सन् 1604 में किया लेकिन गैलीलियो (सन् 1571-1630) ने सर्वप्रथम इसका प्रयोग कर आकाशीय पिण्डों का अध्ययन किया। दूरबीन द्वारा चन्द्र, सूर्य, शुक्र, शनि, बृहस्पति के स्पष्ट चित्र देखे गये और इन सभी का विस्तार से अध्ययन कर अन्य महत्वपूर्ण आविष्कार हुए। धीरे-धीरे दूरबीन खगोल विज्ञान का एक अभिन्न अंग हो गयी। अनन्त से आने वाले प्रकाश को हम अपनी आंखों के छोटे से लेंस से संग्रहित कर जो अध्ययन करते वही प्रकाश संग्रहण धीरे-धीरे बड़े से सेंटीमीटर व मीटर व्यास वाली दूरबीनों से किया जाने लगा। पिछले चार सौ सालों में दूरबीन तकनीक का निरन्तर विकास होता गया और इस तरह से इस ब्रह्माण्ड में हमारी पहुँच अनन्त से और अनन्त तक हो गई।

तारों का जन्मस्थल-ईगल नेबुला एम 16

मेकनील नेबुला वी 1647

तारों की अन्तिम अवस्था-भूरा वामन तारा जे 003618

तारा समूह - एनजीसी 6819

(2 मी. हिमालयन चन्द्र दूरबीन द्वारा लिये गए खगोलीय चित्र)

सूदूर आंसमान से आने वाले प्रथम प्रकाश पुंज के 2 मी. हिमालयन चन्द्रा दूरबीन द्वारा प्रथम प्रतिबिम्ब के साक्षी प्रो. यशपाल एवम् अन्य वैज्ञानिक (26 सितम्बर, 2000)

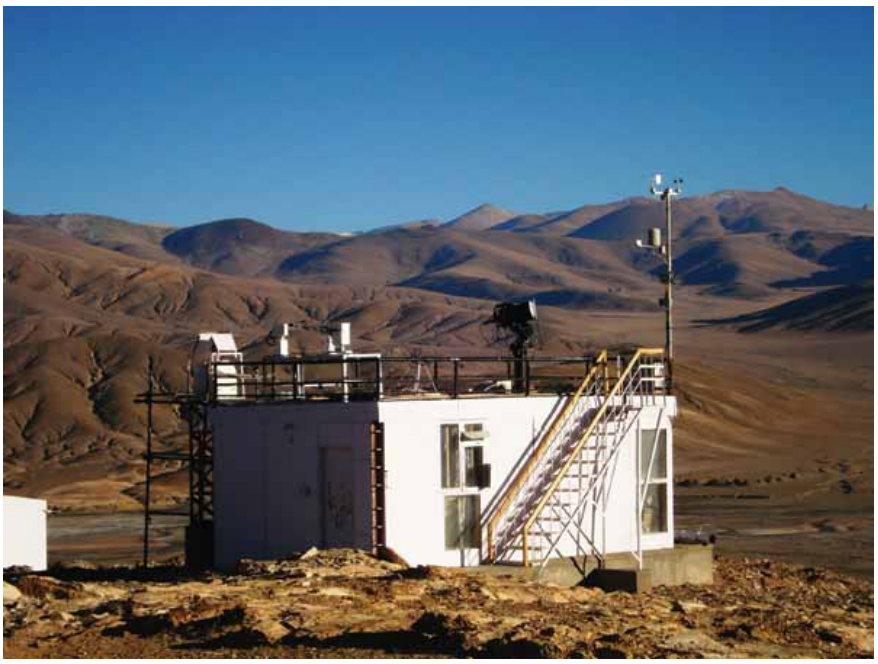

12-इन्च दूरबीन भवन और मौसम सम्बन्धी एवम् अन्य परीक्षण उपकरण

भ्रम को दूर कर सके। मात्र उपाय है स्वच्छ, शांत हवा जो हमें मोटे बादलों के ऊपर स्थित ऊँची पर्वत चोटी पर मिले"। इस प्रकार से दूरबीन आविष्कार के प्रथम डेढ़ सौ साल के दौरान ही दूरबीन के अधिकतम सदुपयोग के लिये स्थल परीक्षण का कार्य शुरू हो गया। 1856 में चार्ल्स पियजी स्मिथ ने सर्वप्रथम दूरबीन के स्थल परीक्षण के लिये दो महीने से अधिक समय केनरी द्वीप समूह में 'गुज़ारा' एवं 'अल्ता विस्ता' का दौरा किया और समुद्र सतह से 2714 मी. और 3262 मी. ऊँचाई पर स्थित क्रमशः अल टेडे तथा टेनेरिफ पहाड़ी ढलानों का अध्ययन किया।

स्थल परीक्षण

इस तरह से खगोल विज्ञान में ही 'स्थल परीक्षण' विधा का जन्म हुआ और किसी भी वेधशाला की स्थापना में स्थल परीक्षण कार्य सहायक होता गया। उन्नीसवीं व बीसवीं सदी में विश्व में बहुत सी खगोल वेधशालाओं की स्थापना हुई। समय के साथ ही तकनीकी विकास हुआ और स्थल परीक्षण कार्य महत्वपूर्ण होता गया। अब दूरबीन के साथ ही अन्य सहायक उपकरणों का उपयोग भी स्थल परीक्षण चयन को प्रभावित करने लगा। आज वर्तमान में हवाई द्वीप समूह में समुद्र सतह से लगभग 14,000 फुट की ऊँचाई पर स्थित 'मौना कया' पहाड़ी की स्थिति एवं वातावरण खगोलीय गुणों के आधार पर प्रकाशीय दूरबीनों के लिये विश्व में आदर्श स्थान माना जाता है। इस चोटी की भौगोलिक बनावट, स्थिति, उच्च तुंगता, शांत-निर्मल वातावरण एवं वायु शुष्कता इस चोटी पर स्थापित दूरबीनों में सुदूर अन्तरिक्ष से आने वाले प्रकाश पुंज को बहुत कम प्रभावित कर पाती है और स्पष्ट प्रतिबिम्ब का निर्माण कर सुदूर स्थित नीहारिकाओं तथा तारा समूहों के बारे में निश्चित खगोलीय जानकारियां उपलब्ध कराती है। वर्ष में लगभग 80 प्रतिशत से ज्यादा रात्रि समय दूरबीनों के अधिकतम उपयोग के लिये उपलब्ध रहता है। लगभग पचास साल पहले 2.2 मीटर दूरबीन की स्थापना के साथ इस खगोल वेधशाला का आरम्भ हुआ और आज यह स्थान विश्व में सभी देशों के खगोलशास्त्रियों के लिये एक तीर्थ स्थल की तरह है। विश्व की बड़े से बड़े व्यास वाली विभिन्न देशों की दूरबीनें मौना कया पहाड़ी में सफलतापूर्वक कार्य कर रही हैं। दुनिया के इस उत्कृष्ट खगोल प्रेक्षण स्थल से हम विद्युत चुम्बकीय वर्णक्रम के दृश्य वर्णपटल के अतिरिक्त नजदीकी अवरक्त वर्णपटल के प्रेक्षण भी प्राप्त कर सकते हैं। दूरबीन से सम्बद्ध अति आधुनिक अवरक्त कैमरा उपकरणों से प्रेक्षित सूचनाएं हमें नवजात तारों के उद्भव एवं पूर्व के जन्म को समझने के लिये सहायक होती हैं। वर्तमान में विश्व की सबसे बड़ी तीस मीटर व्यास वाली दूरबीन परियोजना के लिये भी मौना कया स्थल ही चुना गया है।

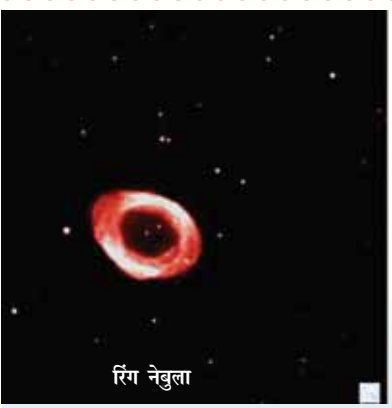

रिंग नेबुला

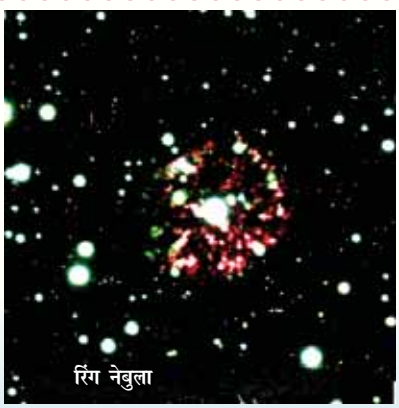

रिंग नेबुला

क्रैब नेबुला

स्टारबर्स्ट गैलेक्सीएनजीसी1637

(2 मी. हिमालयन चन्द्र दूरबीन द्वारा लिये गए खगोलीय चित्र)

भारत में दूरबीन प्रेक्षण एवं विकास

अपने देश भारत के संदर्भ में देखें तो हम पाते हैं कि इसके आविष्कार के कुछ समय बाद ही सन् 1651-1689 के दौरान कुछ विदेशियों द्वारा गुजरात और पुदुचेरी स्थानों पर दूरबीन का प्रयोग कर खगोलीय प्रेक्षण लिये गये। आधुनिक विज्ञान के प्रादुर्भाव के साथ ही ब्रितानी शासकों ने ईस्ट इण्डिया कम्पनी के माध्यम से 1786 में भारत में खगोल विज्ञान की शुरुआत की और तदनन्तर मद्रास वेधशाला का गठन कर वहां विभिन्न प्रकार की छोटी दूरबीनों को स्थापित किया। इस दौरान कई महत्वपूर्ण शोध सामने आए। दूरबीनों के उन्नत और अधिकतम प्रयोग हेतु करीब एक सदी बाद मद्रास वेधशाला को 1887 में कोडईकनाल नामक स्थान पर स्थापित किया गया। यह स्थान उच्च तुंगता क्षेत्र में स्थित होने के कारण एक उन्नत एवं उत्कृष्ट वेधशाला के रूप में विकसित हुआ और आज भी कोडईकनाल सौर वेधशाला के रूप निरन्तर शोध में व्यस्त है।

सन् 1908 में निजाम वेधशाला अस्तित्व में आयी। इस वेधशाला ने आकाशीय मानचित्र बनाया और लगभग सात लाख पचास हजार से ज्यादा तारों की जानकारी का संग्रहकोश तैयार किया। नवीन भारत में हालांकि कई प्रसिद्ध वैज्ञानिक विश्व में अपना स्थान बना पाये जिनमें मेघनाथ साहा, चन्द्रशेखर वेंकटरमन,

2 मी. दूरबीन भवन, 50 सेमी एन्ओपोडल दूरबीन और 12-इन्च मीड दूरबीन

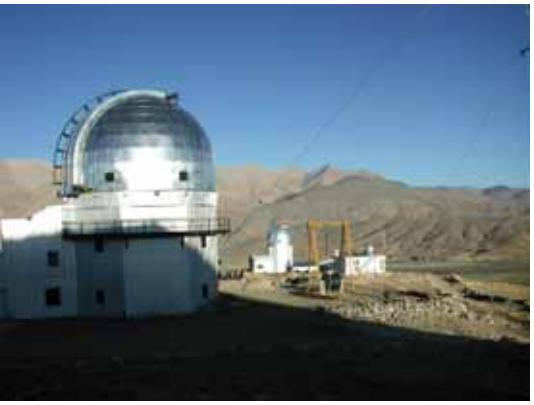

2 मी. दूरबीन के आधार और शीर्ष स्तम्भ

चन्द्रशेखर सुब्रह्मनियम, सत्येन्द्र नाथ बोस आदि प्रमुख हैं। लेकिन आजादी से पहले अन्य वेधशालाओं की स्थापना एवं बड़ी व्यास वाली दूरबीन के लिये हम कोई भी सार्थक पहल नहीं कर पाये।

आजादी के बाद सर्वप्रथम 1955 में नैनीताल वेधशाला का जन्म हुआ। निजाम वेधशाला का उस्मानिया विश्वविद्यालय में विलय हुआ। 1965 में कावलूर वेधशाला स्थापित हुई। तत्कालीन वैश्विक वातावरण एवं मौसम के अनुसार नैनीताल और कावलूर स्थल भारत में दूरबीन स्थापना के लिये आदर्श स्थल रहे और इन वेधशालाओं में अन्य छोटी दूरबीनों के साथ सन् 1972-73 के दौरान एक मीटर व्यास की समान दूरबीनों की स्थापना हुई। 1978 में 1.2 मीटर गुरुशिखर अवरक्त प्रकाश दूरबीन अस्तित्व में आई। इन सभी वेधशालाओं ने भारत खगोल भौतिकी के विकास में महत्वपूर्ण योगदान दिया। दूरबीनों के माध्यम से सुदूर अन्तरिक्ष के दृष्ट्य प्रकाश प्रेक्षणों पर आधारित शोध कार्य से भारत विश्व मानकों में अपना स्थान बनाने में सफल हुआ।

हालांकि सत्तर-अस्सी के दशक में जब हम एक मीटर व्यास वाली दूरबीन से कार्य कर रहे थे, अन्य

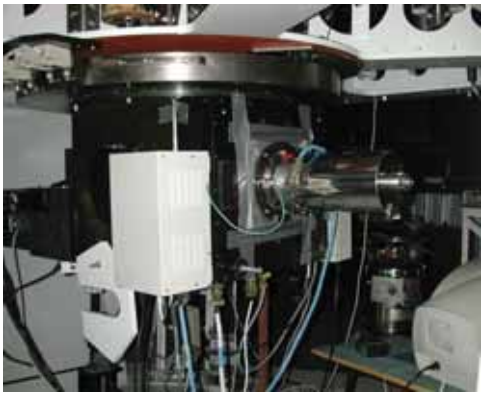

2 मी. दूरबीन के फोकस सीसीडी कैमरा

विकसित देश 3 से 6 मीटर व्यास वाली दूरबीनों का प्रयोग कर खगोल भौतिकी में काफी उच्च स्तर पर थे। भारतीय दूरबीनों की स्थापना के साथ ही हम महसूस कर रहे थे कि विश्व में हम अभी दूरबीन निर्माण एवं सम्बन्धित तकनीक में काफी पीछे हैं। इसलिये भारतीय संदर्भ में नैनीताल एवं कावलूर वेधशालाओं की स्थापना के साथ ही हमारे देश में अन्य बड़ी दूरबीन परियोजनाओं पर कार्य शुरू हो गया। अस्सी के दशक में कावलूर में 2.34 मी व्यास वाली परावर्ती दूरबीन के निर्माण के लिये आवश्यक मूलभूत दर्पण तकनीक, यान्त्रिकी, विद्युतिकी नियंत्रण एवं सम्बन्धित प्रौद्योगिकी का देश में ही विकास किया गया और सन् 1986 में सम्पूर्ण स्वदेशी 2.34 मी. व्यास वाली वेणु बप्पू दूरबीन राष्ट्र को समर्पित की गयी।

भारत में दूरबीन स्थल परीक्षण

इस प्रकार से हालांकि हमने दूरबीन निर्माण के क्षेत्र में तकनीकी दक्षता हासिल कर ली थी लेकिन हम महसूस कर रहे थे कि समय के साथ-साथ वर्तमान स्थलों से हम इन दूरबीनों की दक्षता का सम्पूर्ण दोहन नहीं कर पा रहे हैं। बदलते वैश्विक वातावरण, मौसम और बढ़ती कृत्रिम रोशनी तथा अन्य बड़ी दूरबीन की आवश्यकता ने भारतीय खगोलज्ञों को सोचने के लिये मजबूर किया कि हमें अब अन्य दूरबीन स्थलों की खोज भी करनी चाहिये। नब्बे के दशक के पूर्वार्द्ध में नैनीताल वेधशाला ने चार मीटर दूरबीन परियोजना का

बार्ड गैलेक्सी एनजीसी925

बार्ड स्पाइरल गैलेक्सी एनजीसी5921 में सुपरनोवा

गैलेक्सी एम51 में सुपरनोवा

आकाश गंगा - मिल्की वे का दृश्य

(2 मी. हिमालयन चन्द्र दूरबीन द्वारा लिये गए खगोलीय चित्र)

आवासीय परिसर से वेधशाला पहाड़ी का दृश्य

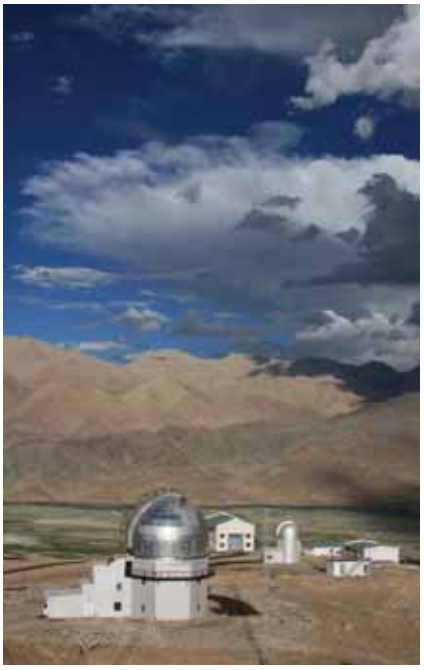

2 मी. दूरबीन भवन, 50 सेमी एन्टीपोडल दूरबीन और 12 इन्च मीड दूरबीन के अतिरिक्त सोलर विद्युत एवम् वैक्यूम कोटिंग संयंत्र

प्रारूप लिखा और उप-हिमालयी क्षेत्रों में स्थल परीक्षण का कार्य शुरू किया। तदनुसार चार-पाँच जगहों पर बादलों की उपलब्धता एवं मौसम से सम्बन्धित प्रेक्षण कार्य शुरू किया। इन प्रेक्षणों के विश्लेषण द्वारा देवस्थल नामक स्थान को खगोलीय उपयोगिता के विस्तृत प्रेक्षणों के लिये चुना गया।

सी दौरान लेह

लद्दाख में भी स्थल चयन का कार्य शुरू किया गया एवं नीमू पहाड़ी को विस्तृत अध्ययन के लिये चुना गया। इस जगह पर मौसम, बादलों, सूक्ष्म तापान्तर विक्षोभ, दूरबीन दृश्य प्रतिबिम्ब, तीक्ष्णता के प्रेक्षण के लिए विभिन्न उपकरण लगाये गये। सन् 1984-88 के दौरान एकत्रित जानकारी के विश्लेषणों से पाया गया कि नीमू एक शुष्क स्थान है लेकिन पहाड़ी के ठीक नीचे से सिन्धु नदी के कारण स्थानीय बादल ज्यादा बन रहे हैं और निष्कर्ष निकला कि लेह शहर एवं आसपास की सैन्य इकाइयों से आकाश की पृष्ठ रोशनी खगोलीय प्रेक्षणों को प्रभावित कर सकती है जोकि निकट भविष्य में अवांछनीय रूप से बढ़ भी सकती है। तत्कालीन विशेषज्ञ समिति ने हालांकि नीमू पहाड़ी के लिये अपनी सहमति नहीं दी लेकिन इस बात की संस्तुति कर दी कि अंदरूनी लेह संभाग में खगोलीय दूरबीन की स्थापना की अपार सम्भावनाएं हैं। यह सभी को ज्ञात था कि लद्दाख की परिस्थितियां काफी कठिन हैं और वहां मूलभूत सुविधाओं का अभाव है, अतः एक मजबूत एवं समर्पित सर्वे टीम की जरूरत पर बल दिया गया। यह आशा की गयी कि यदि पूर्ण सहयोग किया जाय तो एक उत्कृष्ट उच्च तुंगता स्थित खगोल वेधशाला के लिये उपयुक्त स्थान खोजा जा सकता है।

इस दौरान 2.34 मीटर वेणु बप्पू दूरबीन दुनिया के खगोलशास्त्रियों के लिये उपलब्ध होने के बाद भारतीय खगोलशास्त्रियों ने पुनः अपनी बड़ी दूरबीन की आवश्यकता को मुखर किया। लेकिन यह भी सच्चाई थी कि हमें एक उत्तम खगोलीय स्थल की खोज भी करनी है क्योंकि उत्कृष्ट स्थल पर स्थित एक छोटी दूरबीन की वैज्ञानिक उपयोगिता और उत्पादकता एक औसत खगोलीय गुणों वाले स्थल पर बड़ी दूरबीन की उत्पादकता से कहीं ज्यादा और महत्वपूर्ण होती है। अति आधुनिक तकनीक से सुसज्जित वैज्ञानिक उपयोग के लिये उच्च कोटि की दूरबीन एवं सम्बन्धित उपकरण के लिये बहुत धन एवं मानवीय प्रयास की जरूरत होती है और इन सब प्रयासों से स्थापित दूरबीन का उच्च कोटि के अधिकतम प्रेक्षणों के लिये अधिकतम उपयोग लम्बे समय के लिये होना भी आवश्यक है तभी व्यय किये गये संसाधनों और वैज्ञानिक प्रयासों की सार्थकता है।

विश्व में बड़ी दूरबीन के लिये उत्कृष्ट स्थल के बारे में हम पूर्व में उल्लेख कर चुके हैं कि बीसवीं सदी में स्थापित मौना कया स्थान आज भी दृश्य प्रकाश एवं निकट अवरक्त वर्णक्रम में खगोलीय प्रेक्षणों के लिये

50 सेमी एन्टीपोडल दूरबीन डोम से तारों के रात्रि भ्रमण का दृश्य

चन्द्र दूरबीन डोम से तारों के रात्रि भ्रमण का दृश्य

आकाशगंगा - मिल्की वे का दृश्य

(2 मी. हिमालयन चन्द्र दूरबीन द्वारा लिये गए खगोलीय चित्र)

एक आदर्श स्थान है। इस प्रकार पिछले पचास सालों के दौरान बड़े व्यास वाली विभिन्न दूरबीनों की स्थापना हुयी और वर्तमान में इस स्थान पर अन्य बड़ी दूरबीनों के लिये आवश्यक क्षेत्र की कमी होने लगी। अतः 21वीं सदी के दस्तक देने के दौरान ही खगोलशास्त्रियों ने विश्व के अन्य भू-भागों में उच्च कोटि की खगोलीय गुणवत्ता वाले अतिरिक्त स्थलों को खोजने एवं परिभाषित करने की विभिन्न परियोजनाओं में कार्य करना शुरू किया और उत्तरी चिली के शुष्क एवं उच्च तुंगता वाले रेगिस्तान में उत्कृष्ट खगोलीय गुणों वाले बहुत सारे भू-भाग की खोज हुई जो विद्युत चुम्बकीय वर्णक्रम के दृश्य प्रकाशिक वर्णपटल के अतिरिक्त अवरक्त एवं निम्न रेडियो तरंग वर्णपटल के खगोलीय प्रेक्षण भी प्राप्त कर सकते हैं। इनमें ला सेरेना, अटाकामा, अल्मा, सेरोपरनाल, सेरोआरमाजोन्स, सेरोतोलोलो इत्यादि प्रमुख हैं जहां विभिन्न वेधशालाएं स्थापित की जा चुकी हैं और अन्य विशाल दूरबीन परियोजनाओं पर कार्य हो रहा है।

राष्ट्रीय वृहत् व्यास खगोलीय दूरबीन परियोजना

भारतीय संदर्भ में यदि हम बड़े व्यास वाली दूरबीन स्थापित करना चाहें तो हम अन्य स्थलों का प्रयोग नहीं कर सकते हैं क्योंकि यह हमारे राष्ट्र की सामाजिक-आर्थिक मान्यताओं के अनुकूल नहीं है। अतः हमें अपने सीमित संसाधनों द्वारा भारतीय भू-भाग में ही उच्चकोटि की खगोलीय गुणवत्ता वाली जगहों की खोज करनी होगी। यहां इस बात को भी महत्ता दी गयी कि भारतीय प्रायद्वीप के एक बड़े भू-भाग में वर्ष के तीन से चार महीनों के दौरान मानसून की सक्रियता से वर्तमान में किसी भी वेधशाला की दूरबीनों को प्रेक्षणों के लिये प्रयुक्त करना संभव नहीं हो पा रहा है और भारतीय खगोलविदों के लिये इस अवधि में उपलब्ध आकाशीय पिण्डों के शोध कार्य में आत्मनिर्भरता नहीं है। इस प्रकार भारतीय तारा भौतिकी संस्थान, बंगलुरू की अगुवायी में सन् 1991-92 में भारतीय वृहत् व्यास प्रकाशीय दूरबीन परियोजना प्रारम्भ हुयी और राष्ट्रीय स्थल खोज एवं परीक्षण कार्यक्रम की रूपरेखा तैयार कर सर्वे का कार्य शुरू हुआ। इस कार्य के लिये उपग्रह आधारित बादलों से सम्बन्धित सूचनाएं, भौगोलिक

मनाली कलात वेणू बप्पू

भारत में आधुनिक खगोलिकीय अध्ययन प्रक्रिया की स्थापना करने वालों में मनाली कलात वेणु बप्पू का कार्य अत्यन्त महत्वपूर्ण है। उन्होंने भारत में खगोलिकीय अध्ययन और शोध के अनेक संस्थानों का निर्माण किया। बंगलरू में भारतीय खगोल भौतिकी संस्थान की स्थापना में उनकी प्रमुख भूमिका रही। वाराणसी के सम्पूर्णानन्द संस्कृत विश्वविद्यालय में सन् 1954 में स्थापित 'आर्यभट्ट खगोलिकीय संस्थान' को नैनीताल जैसे उपयुक्त खगोलिकीय स्थान पर ले जाने और उसके विस्तार में इनकी भूमिका सबसे महत्वपूर्ण रही है। बप्पू भारत के पहले खगोल वैज्ञानिक हैं, जिन्होंने एक धूमकेतू (पूच्छल तारे) की खोज की।

वेणु बप्पू नैनीताल स्थित आर्यभट्ट वेधशाला के अध्यक्ष रहे। सन् 1960 में वे तमिलनाडु स्थित कोडाईकनाल वेधशाला के निदेशक भी बने। ब्रिटिश काल में ईस्ट इण्डिया कम्पनी के द्वारा अट्ठारहवीं सदी के अन्त में स्थापित यह राष्ट्रीय वेधशाला भारत में भूगोल और खगोलिकीय अध्ययन के लिए स्थापित की गई थी। सन् 1970 के दशक के प्रारम्भ में बप्पू ने काबलूर में एक नये खगोलिकीय अध्ययन केन्द्र की स्थापना की। यहाँ से प्राप्त खगोलिकीय शोध परिणामों को विश्व स्तरीय खगोल परिणामों के समकक्ष पाया गया।

इस महान भारतीय खगोल वैज्ञानिक का जन्म चेन्नई में 10 अगस्त, 1927 को हुआ था। ये अपने माँ बाप की इकलौती सन्तान थे। इनके पिता सुनन्ना बप्पू हैदराबाद की निजामिया वेधाशाला में खगोल वैज्ञानिक थे। इनकी माता मनाली कुकुझी एक सरल गृहणी थी।

अपने पिता के प्रभाव के चलते ही वेणु बप्पू को खगोलिकी के क्षेत्र में बचपन से ही रुचि पैदा हो गई थी। ये विद्यालय की पढ़ाई के दौरान ही शौकिया खगोल विज्ञानी बन गए थे। खगोलिकी के अलावा वेणु बप्पू को चित्रकारी, संगीत, साहित्य, बागवानी व वस्तुशिल्प से भी लगाव था। वे एक प्रभावशाली वक्ता भी थे।

इण्डियन एकेडमी आफ साइन्सेज की बंगलूरु से प्रकाशित होने वाली विख्यात विज्ञान शोध पत्रिका 'करेन्ट साइन्स' में 1946 में इनके दो शोध पत्र प्रकाशित हुए जिनके शीर्षक थे 'द इफेक्ट ऑफ कलर ऑन द विजुअल ऑब्जर्वेशन ऑफ लॉग पीरियड वेरियबल स्टार्स' एवं 'आन द विजुअल लाइट कर्व ऑफ एलटी इरिडानी'।

उन्होंने निजाम कॉलेज में बी.एससी. अध्ययन के दौरान ही 120 डी/मि.मि. परिक्षेपण के स्पेक्ट्रम लेखी का निर्माण कर लिया था। इसके सहयोग से उन्होंने वायुदीप्ति के स्पेक्ट्रम चित्र प्राप्त किए। सन् 1946 में उन्होंने मद्रास विश्वविद्यालय से भौतिकी शास्त्र में एम. एससी. की उपाधि प्राप्त की। इनके एम.एससी. के शोध प्रबन्ध का विषय था 'एमिथिस्ट क्वॅटिज के स्पेक्ट्रदर्शीय और प्रकाश चालकीय गुणधर्म'। एम. एससी. की उपाधि लेने के बाद उन्होंने खगोलिकी में स्नातकोत्तर अध्ययन के लिए हैदराबाद राज्य से छात्रवृत्ति लेकर 1949 से 1951 तक इंग्लैण्ड के हावर्ड ग्रेजुएट स्कूल ऑफ एस्ट्रोलॉजी में अध्ययन किया।

वेणु बप्पू ने हावर्ड में अध्ययन के शुरूआती दौर में ही बार्ट जे. बॉक और गार्डन ए.न्यू किर्क के साथ मिलकर एक धूमकेतू की खोज कर डाली। यह खोज दो जुलाई 1949 को हुई। बप्पू पहले भारतीय थे जिन्होंने एक धूमकेतू की खोज की। इस धूमकेतु की खोज का इतिहास अत्यन्त रोचक है। 2 जुलाई को सुबह तड़के बप्पू ने एक विशेष कार्य योजना के अन्तर्गत हावर्ड कॉलेज की वेधशाला के लोक रिज केन्द्र पर 24 से 33 इंच वाली जेविट श्मिट दूरबीन की सहायता से 'हंस तारा मण्डल' का एक मिनट समय देकर चित्र खींचा। इस चित्र की प्लेट को उसी दिन दोपहर में धो दिया गया। वॉक और बप्पू ने प्लेट की गुणवत्ता तथा फोकस की जाँच के दौरान किसी क्षुद्र ग्रह की उपस्थिति का संकेत पाया। आगे जाँच में पता चला कि यह क्षुद्र ग्रह नहीं धूमकेतु है। इस धूमकेतु की खोज में बप्पू की सबसे बड़ी उपलब्धि यह थी कि उन्होंने कुशल खगोलकर्मियों से पहले ही इस धूमकेतु की कथा का सही-सही निर्धारण अपनी गणना के आधार पर कर लिया।

इस मेधावी भारतीय खगोल वैज्ञानिक ने 1952 में 'द प्रॉब्लम्स ऑफ वोल्फरायेट एटमॉस्फियर्स' विषय पर शोध प्रबन्ध जमा करके इंग्लैण्ड के हावर्ड ग्रेजुएट स्कूल ऑफ एस्ट्रोलॉजी से पीएच. डी. की उपाधि प्राप्त की। पीएच. डी. की उपाधि लेने के बाद बप्पू ने कुछ समय तक इग्लैण्ड की 'माउन्ट विल्सन' तथा 'पालोमर' वेधशालाओं में कार्नेगी के साथ पोस्ट डॉक्टरल फेलो के रूप में शोध किया। इस शोध कार्य के दौरान उन्होंने आलिन सी. विल्सन के साथ मिलकर एक महत्त्वपूर्ण प्रभाव का निर्धारण किया। इस परिघटना को 'विल्सन बप्पू प्रभाव' कहते हैं।

अपने इस काम के बाद 1952 में बप्पू भारत लौट आए। भारत लौटने के पूर्व उन्होंने इग्लैण्ड, फ्रांस और इटली की कई वेधशालाओं का अध्ययन किया। जिस समय बप्पू भारत लौटे उस समय देश की वेधशालाओं में आधुनिक खगोलिकीय के शोध की सम्भावनायें अत्यन्त

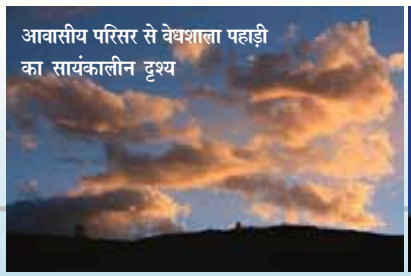

आवासीय परिसर से वेधशाला पहाड़ी का सायंकालीन दृश्य

आंशिक चन्द्रमा का आवासीय परिसर से सायंकालीन दृश्य

क्षीण थीं। भारत में खगोलिकीय क्षेत्र की इस हालत के विषय में उन्हें अच्छी तरह जानकारी थी, फिर भी देश में वैज्ञानिक सम्भावनाओं के विस्तार का लक्ष्य लेकर वे भारत वापस आ गए। शुरूआती दौर में उन्हें कोई काम नहीं मिला। इस निराशाप्रद स्थिति से वे जरा भी विचलित नहीं हुए।

1954 में बप्पू की पहली नियुक्ति उत्तर प्रदेश की राज्य वेधशाला में मुख्य खगोल विज्ञानी के पद पर हो गई। यह वेधशाला अप्रैल 1954 में वाराणसी के सम्पूर्णानन्द संस्कृत विश्वविद्यालय में बनी थी। 1956 में वे इस वेधशाला के अध्यक्ष बने। उन्होंने उत्तर प्रदेश के तत्कालीन मुख्यमन्त्री को अपने निजी प्रयास से इस संस्थान के विकास के लिए राजी किया। उनके प्रयास से यह वेधशाला श्रेष्ठतम् आकाशीय शोध वाले स्थल नैनीताल के लिए स्थानान्तरित कर दी गई।

सन् 1960 में बप्पू तमिलनाडु की 'कोडाईकनाल स्थित वेधशाला' के निदेशक नियुक्त हुए। अपने परिश्रमपूर्ण प्रयास से उन्होंने इस मृतप्राय तथा देश की सबसे पुरानी वेधशाला को पुनर्जीवित कर, व्यवस्थित और नया रूप दिया। सन् 1970 के दशक के प्रारम्भ में बप्पू ने कावलूर में एक नई वेधशाला की स्थापना की। इस वेधशाला द्वारा प्राप्त परिणामों की तुलना विश्व की किसी भी अग्रणी वेधशाला से किया जाना सम्भव है। उन्होंने 2.36 मीटर की दूरबीन के निर्माण की एक परियोजना की संकल्पना की और उसका संचालन किया। इस टेलिस्कोप को पूरी तरह देश में ही बनाने की उनकी संकल्पना थी। दुर्भाग्यवश इसके काम शुरू करने के पहले ही बप्पू इस संसार में नहीं रहे। बाद में इस वेधशाला और टेलिस्कोप का नामकरण बप्पू के नाम पर कर दिया गया।

बप्पू ने न केवल नई संस्थाओं की स्थापना की ओर ही ध्यान दिया बल्कि उन्होंने पूरे समर्पण के साथ खगोलिकी के क्षेत्र में शोध कार्य भी जारी रखा। उन्होंने विभिन्न खगोलिकीय विषयों पर शोधकार्य किए। उनके शोध के क्षेत्र में वायुमण्डल की संरचना, ग्रहीय बलय, वोल्फ रापेट, तारक गुच्छे, तारकीय सम्बन्ध और मन्दाकिनियाँ प्रमुख थीं। खगोलिकीय विस्तार के काम को करते हुए उन्होंने विश्व की अनेक संस्थाओं में भी कार्य किए। वे एरिजोन विश्वविद्यालय एवं किट पीक राष्ट्रीय वेधशाला में अभ्यागत प्रोफेसर रहे। जापान के विज्ञान प्रोन्नति सोसाइटी के मानद सदस्य एवं अहमदाबाद में विक्रम साराभाई पीठ प्रोफेसर जैसे पदों पर भी उन्होंने काम किया। वे अन्तर्राष्ट्रीय खगोलिकी संघ के उपाध्यक्ष और अध्यक्ष भी रहे। उन्होंने 'जर्नल ऑफ एस्ट्रोफिजिक्स एण्ड एस्ट्रोनॉमी' का सम्पादन भी किया। वे भारतीय खगोलिकी संघ के प्रथम अध्यक्ष रहे। बप्पू बेल्जियम एकेडमी ऑफ साइंस के मानद सदस्य चयनित हुए, रॉयल एस्ट्रोनॉमिकल सोसाइटी लंदन के मानद विदेशी एसोशिएट और अमेरिकन एस्ट्रोनामिकल सोसाइटी के मानद सदस्य बने।

अपने अत्यन्त छोटे से जीवनकाल में बप्पू ने अनेक पुरस्कार और सम्मान भी प्राप्त किए, उनमें से कुछ के विवरण इस प्रकार हैं-

एस्ट्रोनॉमिकल सोसाइटी ऑफ द पैसिफिक द्वारा स्थापित 'डोन हो कॉमेट पदक' (1949), वैज्ञानिक तथा औद्योगिक अनुसंधान परिषद् का 'शान्तिस्वरूप भटनागर पुरस्कार' सैद्धान्तिक विज्ञानों में शोध के लिए विश्वविद्यालय अनुदान आयोग के हरिओम ट्रस्ट का 'मेघनाद साहा पुरस्कार' (1977), भारतीय राष्ट्रीय विज्ञान अकादमी का 'सत्येन्द्र नाथ बोस पदक' (1981) प्राप्त किया था। इसके अलावा भारत सरकार द्वारा इन्हें 1981 में 'पद्मभूषण पुरस्कार' से भी नवाजा गया था।

19 अगस्त, 1982 में मात्र 55 वर्ष की अवस्था में जर्मनी के म्यूनिख शहर में उनकी मृत्यु हुई थी।

संपर्क सूत्र :
श्री जयनारायण, ईशान स्टूडियो, दुकान सं. 20, श्री विश्वनाथ मंदिर, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय वाराणसी-221 005 (उ.प्र.)

स्थिति, वातावरण, स्थानीय मौसम की जानकारी, नजदीकी उपलब्ध नागरिक सुविधाएं इत्यादि मानकों का अध्ययन किया गया और चिली की तरह ही भारत के मध्य-उच्च एवं परा-हिमालयी क्षेत्रों में सम्भावित खगोलीय गुणवत्ता वाले स्थानों को चिन्हित किया गया। खगोलविदों की अगुवायी में करीब बीस दलों ने इन सम्भावित स्थलों का विस्तृत दौरा किया और स्थानीय सुविधाओं, भौगोलिक एवं मौसम की विभिन्न जानकारियों का आंकलन किया। इन सभी स्थलों से एकत्रित जानकारियों/आंकड़ों का खगोलीय एवं अन्य तय मानकों के आधार पर विश्लेषण किया गया। परिणामस्वरूप यह पाया गया कि परा-हिमालयी क्षेत्र के उच्च स्थलीय शुष्क, सर्द लद्दाख में स्थित कुछ अंदरूनी क्षेत्र खगोलीय गुणवत्ता के उच्च मापदन्डों पर खरे उतरते हैं। पूर्व में लेह-लद्दाख में हुए सीमित परीक्षण के परिणामों ने भी इस परीक्षण में सहायता की। इस प्रकार लद्दाख के चांगथांग भू-भाग में स्थित हैनले नामक स्थान को विस्तृत अध्ययन के लिये चुना गया।

हैनले लद्दाख

हैनले स्थान की कई स्थानीय एवं भौगोलिक विशेषताओं और अन्य जानकारियों के प्रारम्भिक विश्लेषण के परिणाम काफी उत्साहवर्द्धक रहे। हैनले में एक उन्नत खगोलीय वेधशाला की स्थापना की सम्भावनाओं को आगे बढ़ाने में मदद मिली। यह स्थान लेह नगर से 260 किमी. दक्षिण-पूर्व में तिब्बत सीमा से लगे चांगथांग क्षेत्र में स्थित है। यहाँ जाने के लिये हम पहले सिन्धु नदी के किनारे-किनारे लेह से पूर्व दिशा में प्रारम्भिक 200 किमी. पक्की सड़क से यात्रा करते हैं। फिर हम लोमा नामक स्थान पर दक्षिण को मुड़ जाते हैं और हैनले नदी के साथ-साथ मरूस्थलीय मैदान में लगभग 50 किमी. की यात्रा कर हैनले घाटी में प्रवेश करते हैं जहाँ शताब्दियों पुराना हैनले बौद्ध मठ हमारा स्वागत करता है। सामने ही समुद्र सतह से 14,000 फुट की ऊँचाई पर विशाल नीलाम्बकुल तल फैला नजर आता है। इसी तल के बीचों-बीच एक उभरे हुए द्वीप की तरह है 'दिग्पा रत्सा री' अर्थात् ऊपर से चिड़िया की नजर से देखने पर बिच्छू के उभरे आकार की पहाड़ी। इस पहाड़ी के सर्वोच्च स्थान की समुद्र सतह से ऊँचाई 15,000 फुट है। यही

आवासीय परिसर और वेधशाला को जोड़ती सड़क

आवासीय परिसर से वेधशाला पहाड़ी का दृश्य

स्थान भारतीय खगोलशास्त्र के लिये एक अहम् पड़ाव माना गया।

प्रथम दृष्टया विभिन्न कारण इस स्थान के चयन में सहायक रहे। परा-हिमालयी क्षेत्र में होने के कारण यहां मानसून के बादल नहीं के बराबर पहुँच पाते हैं। स्थानीय लोगों से ज्ञात हुआ कि साल भर मौसम लगभग साफ रहता है। शुष्कता अधिक है। बहुत कम वर्षा होती है। स्थानीय आबादी बहुत कम है, इस प्रकार मानव जनित प्रकाश एवं अन्य प्रदूषण नगण्य माने गये। नागरिक सुविधाओं में आसपास कुछ गांव और भारत-तिब्बत पुलिस की एक कम्पनी स्थित थी। इन सभी कारणों ने इस चोटी को विस्तृत स्थल परीक्षण हेतु चुनने में मदद की। सन् 1993-94 के दौरान विभिन्न खगोलविदों के दलों ने इस स्थान का कई बार संक्षिप्त दौरा कर कई उपकरणों की मदद से आंकड़े एकत्रित किये और उत्साहजनक परिणामों के आधार पर यहां विस्तृत खगोलीय परीक्षणों के लिये एक स्थायी स्टेशन स्थापित करने की संस्तुति की गयी।

नवम्बर 1994 में पहला अभियान दल विभिन्न उपकरणों एवं एक 20 इंच परावर्ती दूरबीन के साथ लेह पहुँचा। लेह में स्वास्थ्य पर्यानुकूलन के लिये करीब एक सप्ताह रुकना आवश्यक था तभी दल के सदस्य हैनले की 15,000 फुट ऊँचाई पर कार्य के लिये शारीरिक और मानसिक रूप से तैयार हो सकते हैं। यह पहला दल था इसलिये किसी भी प्रकार का जोखिम नहीं उठा सकते थे। लेह में इसी दौरान सदस्यों ने कड़ी ठंड में शून्य से नीचे के तापमान एवं उच्च तुंगता स्थित पहाड़ी जगहों पर स्वस्थ रहने और क्षमतापूर्वक कार्य करने के गुर भी सीखे। खगोलीय प्रेक्षणों और अन्य सम्बन्धित जानकारियां हासिल करने का अभ्यास भी किया। दिसम्बर के प्रथम सप्ताह में करीब 6 से 8 अनुभवी खगोल प्रेक्षकों ने हैनले में भारत-तिब्बत पुलिस की अग्रिम चौकी परिसर के पास अपना एक अस्थायी प्रेक्षण केन्द्र स्थापित किया। भारत-तिब्बत पुलिस विभाग ने इस कार्य में महत्वपूर्ण सहायता की। यह केन्द्र शासित 'दिग्पा रत्सा री' पहाड़ी के समीप तलहटी से करीब 4 किमी. उत्तर में 14,300 फुट पर स्थित था। क्योंकि हैनले एक अविकसित और एकांत जगह है, आबादी भी बहुत कम, इसलिये इन कठिन परिस्थितियों में भारत-तिब्बत पुलिस विभाग ने ही कार्यरत दल के सदस्यों की आवासीय, भोजन और अन्य जरूरतों को पूरा किया।

जनवरी 1995 में 20 इंच दूरबीन का संचालन भी आरम्भ हो गया। इस तरह से इस स्थान से क्षेत्र की बृहत् खगोलीय गुणवत्ता का वैज्ञानिक अध्ययन शुरू हो गया। अनवरत् दिन-रात मौसम की जानकारी, आसमान में बादलों की स्थिति, उनकी गति एवं आकार, वायु तापमान, सापेक्ष आर्द्रता इत्यादि का प्रेक्षण एकत्रित किया जाने लगा। 20 इंच दूरबीन के फोकस में लगाये गये सीसीडी कैमरे द्वारा तारों के प्रेक्षण से प्रतिबिम्ब निर्माण की तीक्ष्णता का अध्ययन किया गया। यह कार्य निरन्तर चलता रहा एवं समय-समय पर उपलब्ध आंकड़ों का विश्लेषण भी जारी रहा। जुलाई 1995 में वास्तविक चोटी पर एक स्वचालित मौसम केन्द्र की स्थापना की गयी जिससे हर मिनट की मौसम सम्बन्धी जानकारी उपलब्ध होती रही। 20 इंच दूरबीन से युगल किरण पुंज विधि द्वारा प्रतिबिम्ब निर्माण में वायुमंडलीय विक्षोभ के प्रकाशीय प्रेक्षणों का आंकलन किया गया। इस दौरान प्रेक्षण कार्य लगातार दूसरे साल भी जारी रहा। स्थानीय लोगों को भी इस कार्य में प्रशिक्षित किया गया। जुलाई 1996 में 20 इंच दूरबीन भी 15,000 फुट की ऊँचाई पर स्थापित कर वास्तविक चोटी से ही खगोलीय गुणवत्ता अध्ययन प्रारम्भ किया। इस दौरान एकत्रित आकड़ों के विश्लेषणों से आभास होने लगा था कि यह जगह वैज्ञानिक रूप से भी भारत में खगोलीय दूरबीन स्थापना के लिये एक उत्कृष्ट स्थान हो सकता है, अतः एक सम्पूर्ण वेधशाला के लिये आवश्यक मूलभूत सुविधाएं जुटाने का आरम्भिक प्रयास भी शुरू किया गया।

लद्दाख क्षेत्र में भौगोलिक रूप से ग्रीष्म और शीत दो ही मौसम होते हैं। शीत काल में वर्ष के लगभग 6 महीने से अधिक अवधि तक लद्दाख का शेष भारत से सड़क संपर्क कटा रहता है। लेकिन लद्दाख के अन्दरूनी क्षेत्र में सड़क संपर्क हमेशा वर्ष भर बना रहता है। इसका मात्र एक शहर, लेह जो प्रशासनिक मुख्यालय भी है, पूरे वर्ष बाह्य यातायात से जुड़ा रहता है। इसीलिये मई 1995 में लेह शहर में बड़ी दूरबीन परियोजना के कार्यालय एवं कार्यकारी दल के लिये आवासीय सुविधा की व्यवस्था की गई। वर्ष 1996 के

हैनले मठ

कार्बन डाइऑक्साइड वेधशाला कक्ष - पीछे 2 मी. हिमालयन चन्द्र दूरबीन डोम और 50 सेमी एन्टीपोडल दूरबीन

मध्य से हैनले में भी धीरे-धीरे चोटी के ठीक नीचे स्वयं का आधार शिविर स्थापित करना शुरू किया गया और अक्तूबर 1996 में पुलिस परिसर से अपना सभी संचालन आधार शिविर में स्थानांतरित कर दिया गया। आधार से ही चोटी पर पहुँचकर दूरबीन का संचालन कर अन्य आंकड़ों को एकत्रित किया जाने लगा। इस दौरान सीमा सड़क संगठन द्वारा आवासीय सुविधा हेतु प्री फैब्रिकेटेड स्नो शेल्टर उपलब्ध कराये गए और इन्हें आधार शिविर और चोटी में स्थापित किया गया। सीमा सड़क संगठन ने आधार से चोटी पर पहुँचने के लिये सड़क मार्ग बनाने के लिये सर्वे भी प्रारम्भ किया।

भारतीय खगोल वेधशाला का जन्म

इस प्रकार दो वर्षों में एकत्रित सभी जानकारियों एवं आकड़ों का बृहत् वैज्ञानिक विश्लेषण किया गया

पूर्वी लद्याख स्थित पैन्गाग त्सो लेक से लिया आकाशीय चित्र

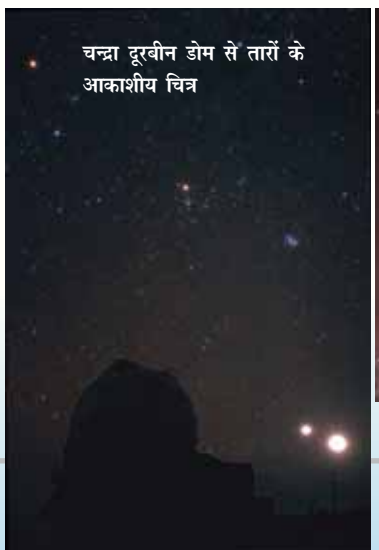

चन्द्रा दूरबीन डोम से तारों के आकाशीय चित्र

लेह शहर से चन्द्र ग्रहण क्रम का आकाशीय चित्र

वेधशाला पहाड़ी पर स्थित वेक्यूम कोटिंग संयंत्र

और यह पाया गया कि इस स्थान पर रात्रिकालीन आकाश साल में 260-280 दिनों तक उच्च कोटि के खगोलीय प्रेक्षणों के लिये उपलब्ध रहता है। मानसून अवधि में भी आसमान अधिक समय तक साफ रहता है। सापेक्ष आर्द्रता काफी कम है। बारिश एवं बर्फ के कुल संकलित पानी का माप बहुत कम है। हवा की गति भी मान्य मात्रा से कम है और चोटी की भौगोलिक स्थिति आदर्श खगोलीय गुणों को इंगित करती है। इस अध्ययन की विस्तृत रिपोर्ट तैयार कर भारत सरकार को सौंपी गयी जिससे हैनले में एक विश्व स्तर की उच्च तुंग खगोलीय वेधशाला बनाने का मार्ग प्रशस्त हुआ। हालांकि परिस्थितियाँ काफी कठिन थीं और इस तुंगता पर सम्पूर्ण वेधशाला की स्थापना एक चुनौती थी इसलिये सन् 1997 में भारत सरकार द्वारा खगोलविदों की इस स्थान पर कार्य करने की क्षमता के परीक्षण के तौर पर एक अत्याधुनिक 2 मी. व्यास की एक परावर्ती दृश्य प्रकाशीय और निकट अवरक्त वर्णक्रम दूरबीन की योजना की सहमति प्रदान की गयी। भारतीय खगोलविदों ने इस चुनौती को सहर्ष स्वीकार किया और योजना को मूर्त्त रूप देने में जुट गये।

इस दौरान हैनले में सभी प्रकार के आंकड़े एकत्रित करने का कार्य जारी रहा। इस कार्य में कुछ अतिरिक्त महत्वपूर्ण परीक्षण भी जुड़ते गये। चोटी पर 100 फुट ऊँची टावर से वातावरण की सतहों पर सूक्ष्म ताप विक्षोभ के आंकड़े एकत्रित करने का कार्य शुरू हुआ। दूरबीन भवन और छत के निर्माण हेतु विशिष्ट सामग्री एवं आवश्यक अनुकूल परिस्थिति का परीक्षण किया गया। जम्मू एवं कश्मीर सरकार ने सम्पूर्ण पहाड़ी के 650 एकड़ क्षेत्र को वेधशाला के लिये हस्तांतरित किया। सीमा सड़क संगठन ने आधार शिविर पर अन्य मूलभूत आवासीय सुविधाओं का निर्माण किया। वाहनों के आवागमन के लिये हैनले मठ से चोटी तक सड़क निर्माण शुरू किया गया। सितम्बर-अक्तूबर 1997 में चोटी के समीप ही जरूरी तकनीकी और अन्य सामानों के भंडारण के लिये एक बड़े गोदाम का निर्माण किया गया।

16 अक्तूबर, 1997 को हैनले की प्रस्तावित 'दिग्पा रत्सा री' पहाड़ी को सरस्वती पर्वत का नाम दिया गया। इसी दिन तत्कालीन राज्यपाल, जम्मू एवं कश्मीर, जनरल के वी कृष्णाराव, परम विशिष्ट सेवा मेडल ने भारतीय खगोल वेधशाला की आधारशिला रखी और 2 मी. दूरबीन भवन का शिलान्यास किया।

2 मी. हिमालयन चन्द्रा दूरबीन का उद्भव

इस दौरान बंगलुरू मुख्यालय में 2 मी. केसेग्रेइन फोकस तल दृश्य और निकट अवरक्त वर्ण क्रम दूरबीन के बारे में और फोकस तल उपकरणों के बारे में गहन अध्ययन एवं विचार-विमर्श हुआ। इस प्रकार एक अत्याधुनिक तकनीक से लैस 2 मीटर दूरबीन निर्माण कार्य अमरीकी-आस्ट्रेलियाई ईओएसटी कम्पनी को दिया गया। इस कम्पनी को भारतीय दल द्वारा प्रस्तावित दूरबीन को सुझायी गई विशिष्टताओं के आधार पर बनाने के लिये अनुबंधित किया गया।

आगामी तीन वर्षों में संस्थान के लिये एक आधुनिक वेधशाला की स्थापना का कार्य प्राथमिकता में रहा लेकिन अन्य गतिविधियां भी अबाध रूप से जारी रहती हैं। 1998 गर्मी में 14 इंच मीड दूरबीन भी स्थापित की गयी जिससे खगोलीय आकड़े को और परिष्कृत रूप से लम्बी अवधि तक लेना संभव हुआ। इस सारी अवधि में स्थल परीक्षण एवं मौसम और बादल संबंधित प्रेक्षण बिना रुकावट के लगातार एकत्रित किये जाते रहे। एक सीमित दल हमेशा हैनले में रहा और इस कार्य में स्थानीय लोगों की मदद से स्थल परीक्षण कार्य, बादलों की गणना इत्यादि का कार्य चलता रहा। मीड दूरबीन से युगल किरण पुंज विधि द्वारा प्रतिबिम्ब निर्माण में वायुमंडलीय विक्षोभ के दृश्य प्रेक्षणों का आंकलन जारी रहा। लेह-हैनले स्थित वैज्ञानिकों/इंजीनियरों का हमेशा बंगलुरू मुख्यालय से

खगोलिकी

हमारा ब्रह्माण्ड, न आदि न अन्त और सनातन। मानव सभ्यता के विकास के साथ ही इस रहस्यमय ब्रह्माण्ड को जानने की, समझने की उत्कण्ठा के साथ ही खगोल विज्ञान का प्रारंभ हुआ। मानव मस्तिष्क के विकास के साथ ही उसकी देखने की प्रकृति प्रदत आंखों की शक्ति का अधिकतम उपयोग इस विज्ञान के सतत् विकास में हमेशा सहायक रहा। तदनन्तर आंखों द्वारा दृश्य प्रकाश के संकलन से प्राप्त सूचनाओं का ज्ञान ही खगोल विज्ञान की सतत् उन्नति का आधार बना। ग्रहों व नक्षत्रों के बारे में खोज की गयी। उनकी प्रकृति, गति एवं आकाश में उनकी उपलब्धता के बारे में ज्ञान कराया गया। ग्रहों, नक्षत्रों सूर्य-चन्द्र की गति के आधार तथा नक्षत्रों की प्रकाश तीव्रता द्वारा आकाशीय चित्रण कर विभिन्न राशियों का उद्भव हुआ।

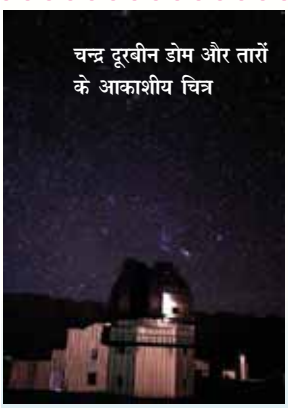

चन्द्र दूरबीन डोम और तारों के आकाशीय चित्र

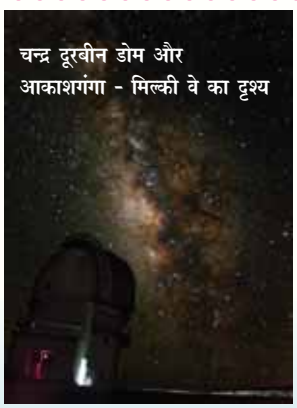

चन्द्र दूरबीन डोम और आकाशगंगा - मिल्की वे का दृश्य

हैनले जाने के लिये सड़क मार्ग और किनारे बहती सिन्धु नदी

हैनले जाने के लिये मरुस्थलीय सड़क मार्ग

आवासीय परिसर के समीप हिमालयन गामा किरण दूरबीन समूह और भू-स्थैतिक स्टेशन

होसकोटे-बंगलुरू स्थित 2 मी. हिमालयन चन्द्र दूरबीन का सूदूर उपग्रह संचालन केन्द्र

संवाद होता रहा। वे 2 मी. दूरबीन स्थापना की प्रगति समीक्षा में भाग लेकर आने वाले गर्मी के मौसम की सीमित अवधि में किये जाने वाले कार्यों के लिये आवश्यक संसाधनों को एकत्रित कर स्वयं की तैयारी में जुटे रहते। यहां इस बात की जानकारी देना जरूरी है कि लद्दाख क्षेत्र में भौगोलिक रूप से ग्रीष्म और शीत दो ही मौसम होते हैं। इस प्रकार मई से लेकर अक्तूबर प्रथम सप्ताह तक ही निर्माण सम्बन्धी गतिविधियां जारी रहती हैं और इसके बाद परियोजना से सम्बन्धित सक्रिय कार्यकलापों को विराम देना पड़ता है। लद्दाख में प्रत्येक जरूरी निर्माण सामग्री एवं कार्यबल के लिये देश-प्रदेश के दूसरे हिस्सों पर निर्भर रहना पड़ता है। काम करने वाले प्रवासी मजदूर, राज मिस्त्री और अन्य विशेषज्ञ ठंड के आगमन और सड़क संपर्क बंद होने से पहले लद्दाख से वापस चले जाते हैं। इस प्रकार जाड़ों का मौसम विशेष रूप से निर्माण कार्य के लिये सक्रिय नहीं रहता है। वर्ष 1997-2000 के बीच की संक्षिप्त अवधि में ही सम्पूर्ण परियोजना को मूर्त रूप देने के लिये संस्थान के वैज्ञानिकों, खगोलविदों, इंजीनियरों एवं तकनीशियनों ने महत्वपूर्ण योगदान किया। इस अवधि के दौरान गर्मी के मात्र तीन सत्र गतिविधियों के हिसाब से बहुत सक्रिय रहे। 1998 सत्र से ही वेधशाला स्थापना का वास्तविक कार्य जोर-शोर से प्रारंभ हुआ। चोटी के लिये सड़क निर्माण शुरू किया गया। वेधशाला की ऊर्जा जरूरतों के लिये डीजल जेनरेटरों को स्थापित किया गया। 160 किलोवाट क्षमता के दो सौर विद्युत संयंत्रों की शुरूआत की गयी। हैनले तथा बंगलुरू के बीच संचार सुविधाओं को परिस्कृत किया गया। लेह स्थित कार्यालय और गेस्ट हाउस सुविधाओं का विस्तार किया गया। हैनले आधार शिविर में आवासीय आश्रय/कुटीरों का निर्माण किया गया।

वर्ष 1999-2000 के ग्रीष्मकालीन सत्र में बंगलुरू से बहुत सारे विशेषज्ञ दलों ने हैनले का दौरा किया और लेह/हैनले में लम्बे समय तक प्रवास कर दूरबीन योजना के लिये मैकेनिकल, सिविल, ऑप्तिकी, विद्युत एवं वैद्युतिकी और कम्प्यूटर संचार से सम्बन्धित रूपरेखाओं पर चर्चा कर विभिन्न कार्यों को पूर्ण किया गया। चोटी पर दूरबीन स्थल को आधार शिविर एवं हैनले मठ से सड़क मार्ग से जोड़ दिया गया जिससे आवागमन और सामान परिवहन के लिये सुविधा हो गयी। इस तरह सन् 2000 जून तक वेधशाला से सम्बन्धित लगभग सभी कार्य पूर्ण कर लिए गये। सौर ऊर्जा, नत्रजन द्रवीकरण, संयंत्र दूरभाष विनिमय केन्द्र, विद्युत नियन्त्रण एवं कम्प्यूटर संचार और उपग्रह संचार उपकरणों का गहन परीक्षण कर प्रयोग के लिये रिपोर्ट जारी की गयी। 2 मी. दूरबीन के लिये कंक्रीट स्तंभ, भवन एवं डोम इत्यादि भी तैयार हो गया। आधार शिविर परिसर में एक सुविधापूर्ण आवास का भी निर्माण किया गया।

इस सम्पूर्ण अवधि में स्थानीय प्रशासन से लगातार सम्पर्क बनाए रखा गया और विभिन्न स्तरों पर उनसे सहयोग भी लिया गया। लद्दाख स्वशासी विकास परिषद् को लगातार परियोजना की प्रगति की जानकारी दी जाती रही। स्थानीय प्रशासन के साथ-साथ लेह स्थित भारतीय सेना 14 कोर मुख्यालय, भारतीय वायुसेना, भारतीय रक्षा अनुसंधान केन्द्र, सीमा सड़क संगठन एवं भारत-तिब्बत सीमा पुलिस इत्यादि संगठनों ने अपने संसाधनों के उपयोग की अनुमति देकर परियोजना के विभिन्न कार्यों के पूर्ण होने में महत्वपूर्ण भूमिकाएं निभायीं। इस दौरान लद्दाख क्षेत्र के रहने वाले प्रशिक्षित, योग्य इन्जीनियरों और तकनीशियनों की खोज कर उन्हें गहन प्रशिक्षण दिया गया और परियोजना के हर पहलू से अवगत कराया गया। इस वेशधाला से सम्बन्धित सभी संयन्त्रों/उपकरणों की स्थापना में इन सभी की भागीदारी रही।

इस दौरान कई विशेषज्ञों ने अमरीका का दौरा कर प्रस्तावित दूरबीन के निर्माण एवं संयोजन में हिस्सा लेकर यह सुनिश्चित किया कि यह हमारे द्वारा दिये गये मानकों के अनुसार हो और उनकी प्रयोगशाला में ही दूरबीन के संचालन से सम्बन्धित सभी प्रकार के परीक्षण किये गये। उनकी प्रयोगशाला में कुछ वैज्ञानिकों को दूरबीन के संचालन से सम्बन्धित तकनीक एवं कार्य प्रणाली का प्रशिक्षण भी दिया गया। गहन परीक्षणों

2 मी. दूरबीन के फोकस पर विभिन्न उपकरण

हैनले जाने के लिये सड़क मार्ग और किनारे बहती सिन्धु नदी

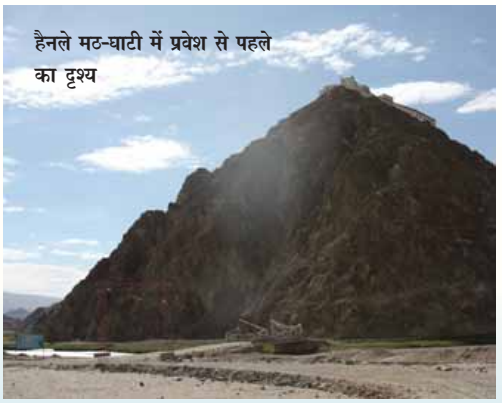

हैनले मठ-घाटी में प्रवेश से पहले का दृश्य

में खरा उतरने के बाद दूरबीन और अन्य सम्बन्धित सभी उपकरणों को पैक कर समुद्री मार्ग से भारत भेजा गया। यह सामान जुलाई 2000 में गुजरात पहुँचा और वहां से सड़क मार्ग द्वारा चन्डीगढ़ वायुसेना इकाई में भेजा गया। यह सभी सामान वायुसेना के आई एल-76 परिवहन विमानों द्वारा अगस्त 2-4, 2000 की अवधि में लेह पहुँचा। भारी सामान के बक्सों को विमान से उतारने के लिए क्रेन इत्यादि उपकरण और कार्यबल भारतीय सेना की पूर्ति एवं सिगनल इकाइयों ने उपलब्ध कराये। इस दौरान सीमा सड़क संगठन ने लेह से हैनले तक सड़क मार्ग को भारी एवं बड़े आकार के सामान के सुरक्षित परिवहन के लिये कई जगहों पर सड़क विस्तारीकरण/चौड़ीकरण का कार्य किया। मार्ग में पड़ने वाले कई छोटे-बड़े पुलों का सुदृढ़ीकरण किया। दूरबीन के सभी पैक हिस्सों/बक्सों को भारतीय सेना और सीमा सड़क संगठन के विशेष परिवहन वाहनों में लाद कर सम्पूर्ण दल ने 17 अगस्त, 2000 प्रातः लेह से हैनले के लिये प्रस्थान किया। सम्पूर्ण मार्ग में सेना ने इस परिवहन दल को सुरक्षा प्रदान की। आसान परिवहन के लिये सेना द्वारा जगह-जगह पर विपरीत दिशा से आने वाले वाहनों को रोका गया। दल के किसी वाहन के फेल होने या रेत में धंसने की स्थिति के लिये राहत दल और क्रेन उपलब्ध करायी गयी। सीमा सड़क ने मोबाइल कर्मशॉप दल एवं अतिरिक्त वाहन की व्यवस्था भी की। पूरे मार्ग में परिवहन के दौरान सेना द्वारा हर पल की स्थिति सम्बन्धित अधिकारियों तक पहुँचायी गयी। सभी वाहन सामान लेकर 18 अगस्त, 2000 की शाम सुरक्षित हैनले 2 मी. दूरबीन स्थल पहुँचे। सभी सामान को उतारकर एक सुविधाजनक जगह पर सुरक्षित रखा गया जहां से इन्हें दूरबीन भवन में आसानी से चढ़ाया जा सका।

इसी दौरान दूरबीन निर्माण की ईओएसटी कम्पनी की अमरीकी इकाई के कई इन्जीनियर और तकनीशियन हैनले पहुँचे और दूरबीन का संयोजन कार्य प्रारम्भ किया गया। सर्वप्रथम 2 मी. दूरबीन के लिये बनाये गये कंक्रीट स्तम्भ में भारी भरकम एजिमथ बेस को स्थापित किया और फिर इस पर दूरबीन के अलग-अलग हिस्सों को जोड़ कर 2 मी व्यास का परावर्ती दर्पण समायोजित किया गया और इस तरह एक सम्पूर्ण

सर आइज़क न्यूटन ने कहा था - "इस प्रकार की दूरबीन नहीं बनायी जा सकती जोकि वायुमंडल द्वारा उत्पन्न प्रकाश किरणों के स्पन्दन भ्रम को दूर कर सके। मात्र उपाय है स्वच्छ, शांत हवा जो हमें मोटे बादलों के ऊपर स्थित ऊँची पर्वत चोटी पर मिले"।

अत्याधुनिक तकनीक से सुसज्जित खगोलीय दूरबीन का जन्म हुआ। दूरबीन की सम्पूर्ण कार्य प्रणाली को सौर ऊर्जा संयंत्र से जोड़ा गया। 26 सितम्बर, 2000 की देर शाम इस दूरबीन को हैनले के आसमान की ओर इंगित किया गया और सुदूर अंतरिक्ष से आकर प्रथम प्रकाश पुंज ने 2 मी. व्यास के परावर्ती दर्पण से केसेग्रेइन फोकस तल में प्रथम प्रतिबिम्ब का निर्माण किया। भारतीय खगोलिकी में यह एक ऐतिहासिक क्षण था। इस घटना के समय हैनले में भारतीय खगोलिकी के पुरोधा प्रोफेसर यशपाल की अगुवाई में कई महत्वपूर्ण वैज्ञानिक भी उपस्थित थे जो इस प्रथम प्रकाश पुंज प्रेक्षण के साक्षी बने। इस प्रकार हिमालयन चन्द्रा दूरबीन का जन्म हुआ। यह नाम भारतीय मूल के नोबल पुरस्कार विजेता प्रख्यात खगोलविद् चन्द्रशेखर सुब्रह्मनियम को याद करके दिया गया।

लेकिन असली चुनौती अभी समाप्त नहीं हुई थी। अमरीकी सदस्य प्रेक्षण से सम्बधित आरम्भिक कार्य एवं प्रशिक्षण देकर वापस चले गये। ठंड का मौसम शुरू हो गया था। तापमान शून्य से 5-10°C से नीचे तक जाने लगा था। डोम घुमाने के लिये आवश्यक स्वचालित व्यवस्था नहीं हो पायी थी और तीसरी मंजिल के प्रेक्षण तल में खुले आसमान में रहकर दूरबीन की स्थिति के अनुसार डोम घुमाने के लिये एक तकनीशियन का उपस्थित रहना आवश्यक था। दूरबीन नियन्त्रण कक्ष भी ठंड के लिये वातानुकूलित नहीं था। लेकिन संस्थान के समर्पित दल ने अगले पूरे 4-5 महीने के दौरान विभिन्न तकनीकों (शैक हार्टमन विधि व समान्तर सरेखण विधि आदि) द्वारा दूरबीन के परिचालन एवं तीक्ष्ण फोकस युक्त प्रतिबिम्ब निर्माण के लिए कई गहन परीक्षण किये। एकत्रित प्रेक्षणों का विश्लेषण कर लक्ष्य ग्रहण क्षमता एवं दूरबीन अनुगामिता सामर्थ्य का आंकलन किया गया।

दूरबीन स्थापना के साथ-साथ यह भी सोचा गया कि जब दूरबीन राष्ट्रीय/अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर खगोलशास्त्रियों के लिये उपलब्ध होगी तो उन्हें लेह/हैनले की कठिन परिस्थितियों एवं वातावरण का सामना करना पड़ेगा और आवश्यक स्वास्थ्य अनुकूलन के लिये लेह में अतिरिक्त समय गुजारना होगा। इस प्रकार से 2 दिवसीय दूरबीन प्रेक्षण के लिये प्रेक्षक को 10 दिनों का समय निकालना होगा। दूरबीन संचालन की तकनीक में यह संभव था कि हैनले की 2 मी. दूरबीन की सभी कम्प्यूटर संचालन प्रणालियों को आधुनिक उपग्रह संचार व्यवस्था द्वारा 3 हजार किमी. दूर बंगलुरू से भी सक्रिय किया जा सकता है। इस स्थिति में न्यूनतम समय में दूरबीन एवं प्रेक्षक की पूर्ण क्षमता का अधिकतम उपयोग सुनिश्चित रूप से संभव प्रतीत हुआ। इस प्रकार से भारतीय तारा भौतिकी संस्थान के बंगलुरू परिसर से लगभग 40 किमी. दूरी पर स्थित होसकोटे नगर के पास 1999-2000 में विज्ञान एवं तकनीकी शोध-शिक्षण केन्द्र की स्थापना

सोलर विद्युत संयंत्र

2 मी. दूरबीन-खुले डोम के साथ रात्रि प्रेक्षणों के लिये तैयार

वेधशाला पहाड़ी पर निर्मित बौद्ध स्तूप और 2 मी. दूरबीन

कार्बन डाइऑक्साइड वेधशाला कक्ष और 2 मी. हिमालयन चन्द्र दूरबीन डोम

लेह-हैनले मार्ग में स्थित थिक्से बौद्ध मठ

2 मी. दूरबीन की सफलता ने हैनले को लद्दाख स्थल के खगोलीय गुणों को नये आयाम दिये हैं। यह स्थल भविष्य की दृश्य एवं अवरक्त प्रकाशीय बड़े व्यास वाली दूरबीनों की परियोजनाओं के लिये विश्व में एक बड़ी पहचान बनाने की क्षमता रखता है।

की गयी। इस केन्द्र में उपग्रह दूर संचार प्रणाली से सम्बन्धित उपकरणों की स्थापना की गयी और हैनले दूरबीन के सुदूर संचालन एवं नियन्त्रण केन्द्र का निर्माण हुआ। दूरबीन की स्थापना होने के बाद इसकी तकनीक को उपग्रह दूर संचार प्रणाली से जोड़ा गया। इस प्रणाली का हैनले और होसकोटे से गहन परीक्षण किया गया और यह पाया गया कि दूरबीन एवं अन्य उपकरणों का संचालन हैनले स्थित नियन्त्रण कक्ष और होसकोटे के सुदूर केन्द्र से समान रूप से सूक्ष्मतम समयांतराल में सफलतापूर्वक किया जा सकता है। 2 मी. हिमालयी चन्द्रा दूरबीन और इसकी सुदूर नियन्त्रण प्रणाली का हैनले से तत्कालीन माननीय मुख्यमन्त्री, जम्मू-कश्मीर राज्य, जनाब फारूख अब्दुल्ला द्वारा 2 जून, 2001 को लोकार्पण किया गया।

वर्ष 2001-2002 में फोकल तल के लिये नये उपकरण हैनले पहुँचे। दृश्य वर्णक्रम के पराबैंगनी से लाल प्रकाश वर्णक्रम में खगोलीय पिण्डों के अध्ययन हेतु प्रतिबिम्ब निर्माण एवं वर्णक्रम विवर्तन के प्रेक्षणों के लिये हैनले क्षीण प्रकाशिक वर्णक्रम लेखी बिम्बक नामक उपकरण को दूरबीन के साथ जोड़ा गया और इस उपकरण की क्षमता का भी गहन परीक्षण किया गया। वर्तमान प्रकाशीय दूरबीन को निकट अवरक्त वर्णक्रम प्रेक्षणों के अनुकूल भी बनाया गया। तदनन्तर एक अवरक्त प्रेक्षण बिम्बक भी संस्थान में ही विकसित कर दूरबीन के फोकस तल में लगाया गया। दूरबीन की स्वचालित सूक्ष्म अनुगामी कार्यविधि को भी दूरबीन की संचालन प्रणाली से जोड़ा गया। इस अवधि में स्थानीय और होसकोटे संचालन केन्द्रों से दूरबीन की क्षमता, डोम स्व-संचालन और फोकस तल उपकरणों से सम्बन्धित सभी कार्यप्रणालियों का गहन परीक्षण किया गया। इस प्रकार सम्पूर्ण 2 मी. हिमालयी चन्द्र दूरबीन संयन्त्र की अनवरत कार्यक्षमता की विश्वसनीयता स्थापित होने के बाद मई, 2003 से विश्व के खगोलविदों के प्रयोग के लिये प्रारम्भ कर दिया गया।

2 मीटर हिमालयन चन्द्र दूरबीन : एक राष्ट्रीय सुविधा

यह दूरबीन एक राष्ट्रीय सुविधा घोषित की गयी और एक दूरबीन समय आंबटन समिति का गठन किया गया। समिति द्वारा साल में चार महीनों के तीन चक्रों, (प्रथम जनवरी-अप्रैल, द्वितीय मई-अगस्त सितम्बर और तृतीय सितम्बर-दिसम्बर) के लिये क्रमशः नवम्बर, मार्च, एवं जुलाई की पहली तारीख तक दूरबीन द्वारा प्रेक्षणों की वैज्ञानिक आवश्यकता के लिये निर्धारित प्रारूप में आवेदन आमन्त्रित किये जाते हैं। इन वैज्ञानिक प्रारूपों को सम्बन्धित विषय विशेषज्ञों के पास भेजा जाता है और योग्यता के आधार पर सम्पूर्ण चक्र के लिये रात्रिकालीन समय अनुसंधानकर्त्ताओं को आवंटित किया जाता है। सम्बन्धित अनुसंधानकर्ता/प्रेक्षक होसकोटे स्थित सुदूर संचालन-नियन्त्रण केन्द्र जाकर हैनले स्थित दूरबीन से आवश्यक प्रेक्षण लेते हैं। इस क्रम में यह जानना जरूरी है कि हैनले वेधशाला में इन्जीनियर और तकनीशियन हमेशा उपलब्ध रहते हैं और सम्बन्धित सभी कार्य प्रणालियों को तैयार रखते हैं। प्रत्येक दोपहर बाद फोकस तल के सीसीडी कैमरा उपकरणों को निम्न तापमान में रखने के लिये द्रवीकृत नत्रजन भरते हैं। तत्पश्चात् शाम को सूर्यास्त के बाद दूरबीन के सीसीडी कैमरा के मानकीकरण हेतु सायंकालीन आकाश की मद्धिम रोशनी के विभिन्न प्रेक्षण लेते हैं। फिर अँधेरा होते ही सम्पूर्ण दूरबीन नियन्त्रण होसकोटे स्थित आगन्तुक प्रेक्षक को स्थानांतरित कर दिया जाता है। इस प्रकार होसकोटे से दूरबीन को घुमाकर आकाश में खगोलीय पिंड की ओर लक्ष्य किया जाता है। डोम के खुले द्वार को भी इसी दिशा में घुमाकर विभिन्न उपकरणों का संचालन कर आवश्यक प्रेक्षण एकत्रित किये जाते हैं। होसकोटे नियन्त्रण कक्ष में स्थित कम्प्यूटर मॉनीटरों पर खगोलीय प्रतिबिम्ब एवं वर्णक्रम विवर्तन भी देखे जा सकते हैं। इनकी तीक्ष्णता का परीक्षण कर दूरबीन के फोकस तन्त्र को चलाकर श्रेष्ठ गुणवत्ता के प्रेक्षण एकत्रित करते हैं। प्रेक्षणों के एकत्रित करने का यह कार्य अनवरत पूरी रात्रि चलता है। इस दौरान हालांकि

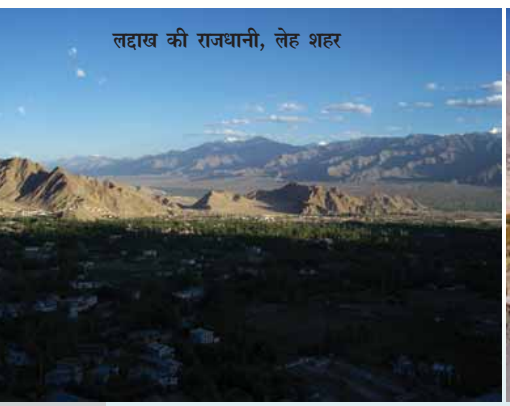

लद्दाख की राजधानी, लेह शहर

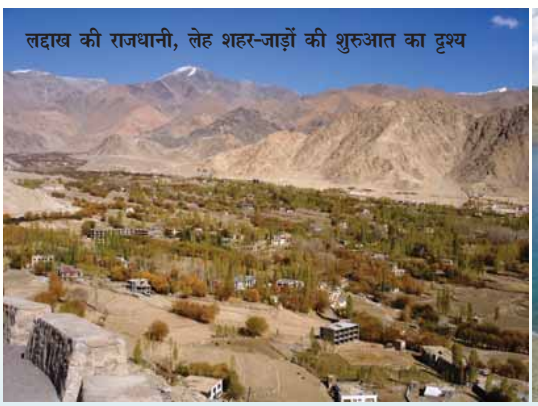

लद्दाख की राजधानी, लेह शहर-जाड़ों की शुरुआत का दृश्य

पूर्वी लद्दाख स्थित पैन्गांग त्सो लेक

सम्पूर्ण नियन्त्रण होसकोटे के पास रहता है। हैनले स्थित तकनीशियन दूरबीन संचालन एवं उपग्रह संचार पर पूरी तरह से निगाह रखते हैं। हैनले होसकोटे के बीच में त्वरित उपग्रह वाक् सम्पर्क हमेशा कायम रहता है। मौसम के बारे में लगातार होसकोटे को अवगत कराते हैं। हैनले में स्थित दिन और रात के लिये अलग-अलग स्थापित कैमरा उपकरण आसमान में बादलों की स्थिति की तत्कालीन जानकारी बिना किसी विलम्ब के होसकोटे स्थित प्रेक्षकों को लगातार देते हैं। इस तरह होसकोटे प्रेक्षक अपने खगोलीय प्रेक्षण नियोजित कर पाते हैं। आपात स्थिति में हैनले स्थित तकनीशियन दूरबीन का नियन्त्रण होसकोटे को बिना अवगत कराये दूरबीन के सम्पूर्ण संचालन को रोक कर किसी भी प्रकार की हानि को रोक सकते हैं।

इस प्रकार से भारतीय खगोल वेधशाला हैनले, लद्दाख स्थित 2 मी. हिमालयन चन्द्र दृश्य और निकट अवरक्त वर्णक्रम दूरबीन और विज्ञान एवं तकनीकी शोध शिक्षण केन्द्र, होसकोटे स्थित सुदूर संचालन नियंत्रण प्रणाली भारतीय खगोलिकी में एक मील का पत्थर साबित हुए। सफल संचालन के विगत दशक के दौरान इस दूरबीन से कार्य हेतु समय आबंटन के लिये देशी-विदेशी आवेदनों में काफी स्पर्द्धा रही है। दूरबीन की विश्व मानचित्र में स्थिति भी काफी महत्वपूर्ण रही है। पूर्व में आस्ट्रेलिया की साइडिंग स्प्रिंगवेधशाला के बाद एक लम्बे देशान्तर अंतराल में उत्तम वेधशालाओं में मात्र भारतीय 2 मी. चन्द्र दूरबीन ही कार्यरत है। तत्पश्चात् पश्चिम में यूरोपीय वेधशालाएं हैं। इस प्रकार हमारी दूरबीन कतिपय खगोलीय पिण्डों की सतही संरचना से सम्बन्धित विक्षोभ के समय के साथ अनवरत पूर्णकालिक प्रेक्षणों को प्राप्त करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। यह जानकारी देना आवश्यक है कि इस दूरबीन के प्रारम्भिक परीक्षण के दौरान ही 21-23 फरवरी, 2001 में एक अंतर्राष्ट्रीय सूचना के आधार पर एक गामा किरण प्रस्फोट घटना का प्रकाशिक अनुगमन किया गया जो अपने आप में एक दुर्लभ एवं महत्वपूर्ण प्रेक्षण श्रृंखला रही और इस घटना पर 2 मी. दूरबीन का प्रथम शोध पत्र प्रकाशित हुआ। बाद में इस दूरबीन से बहुत सारी गामा किरण प्रस्फोट घटनाओं का प्रेक्षण किया गया और इन प्रेक्षणों का राष्ट्रीय एवं अंतर्राष्ट्रीय संयुक्त अध्ययनों में महत्वपूर्ण योगदान रहा। सुदूर अंतरिक्ष में स्थित आकाशीय पिण्डों के खगोलीय अध्ययन हेतु इस दूरबीन में लगाये गये हैनले क्षीण प्रकाशिक वर्णक्रमलेखी बिम्बक दृश्य प्रकाशीय एवं निकट अवरक्त प्रकाशिक प्रेक्षण बिम्बकों से प्रेक्षण लेकर विभिन्न खगोलीय विषयों में शोध एवं अनुसन्धान किये गये जिनका संक्षिप्त विवरण इस प्रकार से है : अपनी गृह आकाशगंगा स्थित कई जातरा पुंजों के भौतिक गुणों की गणना और इन गुणों के आधार पर तारों का निर्माण एवं क्रमिक विकास, इन तारा पुंजों में छोटे युवा तारों की संभवनाएं, तारा पुंजों की आकाशगंगा में स्थिति एवं आकाशगंगा की संरचना, अंतरतारकीय गैस-धूल-बादल से नवजात तारों का उद्भव और इनकी

गर्मियों में सिन्धु नदी किनारे स्थित लेह शहर

संरचना का अध्ययन। कई विशिष्ट तारों की संरचना एवं उसमें उपस्थित रासायनिक तत्वों/अवयवों की खोज और अध्ययन, तारों की रचना में कतिपय भौतिक कारकों/क्रियाओं की महत्ता इत्यादि। कुछ विशेष प्रकार के तारों में विस्फोट जनित प्रकाशीय ऊर्जा का आंकलन और उसकी स्थिति की समीक्षा। अन्य ग्रहाकार नीहारिका एवं वलय युग्म तारों-नवतारों सुनवतारों एवं वामन तारों का अध्ययन।

परागांगेय मन्दाकिनियों में तारों का निर्माण एवं इनमें सुनवतारा स्फुटिक घटनाएं, विभिन्न मन्दाकिनियों की संरचना, मन्दाकिनी पुंज, सक्रिय गांगेय नाभिक, क्वासर और गामा किरण स्फोट घटना का खगोलीय अध्ययन।

धूमकेतु टेम्पल एक में नासा द्वारा किये गहन आघात घटना के पहले और बाद की धूमकेतु की सतह संरचना एवं घूर्णीय अवस्था में परिवर्तन के अध्ययन के लिये विश्व के विभिन्न भागों में स्थित वेधशालाओं से धूमकेतु की अनवरत प्रेक्षण श्रृंखला में 2 मी. दूरबीन के प्रकाशीय प्रेक्षणों ने काफी महत्वपूर्ण योगदान किया। इसी प्रकार वैश्विक अनवरत प्रेक्षण श्रृंखला में शुक्र ग्रह के अन्धेरे भाग के अवरक्त वर्णक्रम में प्राप्त प्रेक्षणों से शुक्र ग्रह के गतिमान वायुमंडल का अध्ययन किया गया।

इस प्रकार विगत वर्षों में 2 मी. दूरबीन द्वारा प्राप्त प्रेक्षणों के आधार पर कई महत्वपूर्ण शोध सामने आये। लगभग 100 से ज्यादा शोधपत्र राष्ट्रीय-अंतर्राष्ट्रीय मानक शोध पत्रिकाओं/ग्रन्थों में प्रकाशित हो चुके हैं और दस से ज्यादा विद्यार्थियों को तैयार शोध प्रबन्धों पर डॉक्टरेट की उपाधियां प्रदान की गयी हैं। वर्तमान में भी दूरबीन अपनी पूरी क्षमता से सफलतापूर्वक कार्य कर रही है। विगत् 26 सितम्बर, 2010 को इस दूरबीन द्वारा प्रथम प्रकाश पुंज प्रेक्षण की दसवीं वर्षगांठ हैनले में मनायी गयी और लेह-हैनले के इन्जीनियरों/कर्मचारियों एवं होसकोटे से कतिपय वैज्ञानिकों ने इसमें भाग लिया। आशा की जाती है कि यह दूरबीन एक लम्बे समय तक भारतीय खगोलिकी को अपनी सेवाएं देती रहेगी और इसका खगोलीय शोध एवं अनुसंधान में अविस्मरणीय योगदान रहेगा।

इस संदर्भ में यह जानना आवश्यक है कि 2 मी. दूरबीन की स्थापना के दौरान भी स्थल परीक्षण मानकों का एकत्र करना जारी रहा और लगातार पिछले 15 सालों से अधिक की महत्वपूर्ण सूचनाएं आज उपलब्ध हैं। हां, छोटी दूरबीन की अनुपलब्धता एवं 2 मी. दूरबीन की स्थापना में व्यस्तता से युगल किरण पुंज विधि द्वारा प्रतिबिम्ब निर्माण में वायुमंडलीय विक्षोभ के प्रकाशिक प्रेक्षणों का लगातार संकलन नहीं हो पाया है। बाद में इन प्रेक्षणों को 2 मी. दूरबीन के साथ 10 इंच मीड दूरबीन से भी लिया गया है। स्थल परीक्षण में अभी तक एकत्रित आकड़ों की मदद लेकर इनका विस्तार किया जा रहा है। वातावरण की खगोलीय विशेषताओं की जानकारी अन्य कई स्वचालित स्वलेखी उपकरणों का विकास किया जा रहा है जिससे कि आकड़ों का अनवरत संकलन हो सके। अंत में यह जानकारी देना आवश्यक है कि 2 मी. दूरबीन की सफलता ने हैनले को लद्दाख स्थल के खगोलीय गुणों को नये आयाम दिये हैं। यह स्थल भविष्य की दृश्य एवं अवरक्त प्रकाशीय बड़े व्यास वाली दूरबीनों की परियोजनाओं के लिये विश्व में एक बड़ी पहचान बनाने की क्षमता रखता है। 2 मी. दूरबीन के सफल संचालन से उत्साहित खगोलविदों ने हैनले क्षेत्र में एक बड़ी 8-10 मीटर व्यास वाली दूरबीन के प्रारूप में कार्य करना शुरू किया है।

संपर्क सूत्र :
डा. बी. सी. भट्ट, इंण्डियन इन्स्टीट्यूट ऑफ एस्ट्रोफिज़िक्स, ब्लॉक-2, कोरमंगला, बंगलूरु (कर्नाटक)
[ई-मेल : bcb@iiap.res.in]